ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 8.4
IJAR 2021; 7(8): 472-476
www.allresearchjournal.com
Received: 13-07-2021
Accepted: 16-08-2021

डॉ. हरिशंकर प्रजापति
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, राजकीय शास्त्री संस्कृत महाविद्यालय, महापुरा, जयपुर, राजस्थान, भारत

Corresponding Author:
डॉ. हरिशंकर प्रजापति
सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, राजकीय शास्त्री संस्कृत महाविद्यालय, महापुरा, जयपुर, राजस्थान, भारत

आधुनिक हिन्दी काव्यों में ज्योतिषीय प्रयोग एवं काव्यात्मक उपादेयता

डॉ. हरिशंकर प्रजापति

सारांश
पूर्ववर्ती कवियों की भाँति हिन्दी के आधुनिक काल के कवियों ने भी ज्योतिषीय प्रयोगों की परम्परा का समुचित निर्वाह किया है। उन्होंने सिद्धान्त, होरा और संहिता ज्योतिष के तीनों अंगों से सम्बन्धित विभिन्न ज्योतिषीय प्रयोग अपनी रचनाओं में किये हैं और यह प्रयोग कहीं आलंकारिक चमत्कार की दृष्टि से तो कहीं भाव सौन्दर्य सम्वर्द्धन की दृष्टि से और कहीं भावी घटनाओं के पूर्व आभासा के रूप में काव्यात्मक दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी बन पड़े है।

कूटशब्द: चय-क्षय, नैराश्य, नवर-कुण्डल, द्विद्वादिशयोग, अंग-स्फुरण, वामाङ्ग।

प्रस्तावना
आधुनिक हिन्दी काव्य का शुभारम्भ भारतेन्दु हरिश्चन्द्र जी के काल से माना जाता है। आधुनिक हिन्दी कविता में अपने परिवेश और राष्ट्र के प्रति जो सजगता आयी, पाश्चात्य साहित्य के सम्बन्ध में आने से विषयों का जो वैविध्य और दृष्टि की व्यापकता आयी, जो मानवीय सहानुभूति और आधुनिक संवेदना आयी उसने इस काव्य धारा को पूर्ववर्ती हिन्दी कविता से नितान्त विशिष्ट पहचान दी। इसीलिए आधुनिक कविता में आदिकालीन और मध्यकालीन कविता की भाँति बहुज्ञता और विशेषता ज्योतिषीय ज्ञान का परिचय और प्रवर्शन प्रायः प्रदर्शित नहीं होता है। फिर भी ऐसा नहीं है कि आधुनिक कवि ज्योतिष शास्त्र से परिचित नहीं रहे हैं अथवा उन्होंने ज्योतिषीय विषयों का प्रयोग बिलकुल भी नहीं किया।

कविवर जगन्नाथदास रत्नाकर, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्तजी, गिरिजा दत्त शुक्ल "गिरीश", रामानन्द तिवारी, श्री नरेश मेहता आदि अनेक कवियों ने अपनी बहुत सी रचनाओं में ज्योतिषीय प्रयोग किये है और कई स्थलों पर यह प्रयोग काव्यात्मक दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी भी सिद्ध हुये हैं।

आधुनिक कविताओं में हुए इन ज्योतिषीय प्रयोगों ओर उनकी काव्यात्मक उपादेयता दृष्टि गोचर करेंगे -

ज्योतिष प्रकरण के अन्तर्गत सूर्य-चन्द्र ग्रहण, चन्द्र चय-क्षय आदि ज्योतिषीय प्रयोगों का अंकन किया है। यथा-

ग्रहण-प्रकरण -

कवि रत्नाकर जी ने अपनी कविता में सूर्यग्रहण का प्रयोग किया है, जो अधोलिखित है -

करि उपयुक्त उपाय प्रथम हम खोज लगावौ।
जथा जोग उद्योग साधि ताँको पुनि पावौ।।
अपकीरति अपमान अमंगल नतु जग जै है।
विमल भानु कुल आनि राहूँ छाया परि जै है[1]।।

इस स्थल पर कवि ने अन्तिम पंक्ति "विमल भानु कुल आनि राहु छाया परि जै है" में सूर्यग्रहण का अंकन किया है, क्योंकि राहु की छाया का सूर्य बिम्ब में दिखायी देना ही सूर्यग्रहण है।

अत: कविवर का ग्रहण परक प्रयोग ज्योतिषीय मान्यता एवं शास्त्र सम्मत है[2]।

कवि नरेन्द्र शर्मा ने भी अपने काव्य में चन्द्र ग्रहण का अंकन किया है। यथा -

दारुक यह कहता था, वनमाली वनवासी।
निर्विकल्प समाधिस्थ हलधर अब संन्यासी।।
यादवकुल-पूर्णचन्द्र ग्रस्त-अस्त, महाबाहु।
अपने हित अपना ही अहंकार बना राहु[3]।।

इस स्थल पर कविवर ने अन्तिम दो पंक्तियों में चन्द्र ग्रहण का अंकन किया है। यहाँ यादव कुल पूर्ण चन्द्रमा और उसका अहंकार राहु है। राहुरूपी अहंकार ने यादव रूपी चन्द्रमा को ग्रसकर उसके यश को समाप्त कर दिया है।

ज्योतिषीय मान्यतानुसार राहु पूर्ण चन्द्र को ही ग्रसता है, अत: कवि का प्रयोग ज्योतिषीय मान्यता पर आधारित है[4]।

कवि रामानन्द तिवारी शास्त्री "भारती नन्दन" ने भी अपने काव्य में ज्योतिष के ग्रहण प्रयोग पर भी लेखनी चलायी है। एतद् विषयक स्थल द्रष्टव्य है –

राहु-ग्रस्त रवि-तुल्य सभा में म्लान-वदन श्री-हीन।
बैठे थे सुरराज, चतुर्दिक खड़े देवता दीन,
लज्जित, चिन्तित औ निराश थे आजत मुख मौन।
उस निस्पाय-दशा में किससे क्या कह सकता कौन[5]"।।

इस स्थल पर सूर्य इन्द्र है तथा तारकासुर राहु है। तारक के उत्पातों से व्यथित हुए कान्तिहीन मुख वाले इन्द्र को यहाँ राहु द्वारा ग्रसित सूर्य कहा गया है। ग्रहण के समय राहु जब सूर्य को ग्रस लेता है तो सूर्य भी म्लान हो जाता है।

अत: कवि का ग्रहण परक प्रयोग ज्योतिषीय मान्यता पर एवं शास्त्र सम्मत है[6]।

चन्द्र क्षय-चय -

कवि गिरिजा दत्त शुक्ल "गिरीश" ने अपने काव्य "तारकवध" में चन्द्र क्षय-चय सिद्धान्त का अंकन किया है। जो अधोलिखित है -

"नभवाणी द्वारा उत्तेजित ताण्डव नर्तन चला प्रचण्ड।
रूद्र-विराट देह के अवगुण अस्थिर होने लगे अखण्ड।।
मन्मथ सृष्टिकार चतुरानन श्रीपति अग्निदेव गन्धर्व।
रवि शशि यक्ष अतुर सिद्धादिक पीड़ामग्न हो चले सर्व।।
नृत्यावेश - पराकाष्ठा ने किया अमित उद्दीपित भाव।
चन्द्रकला के संग बढ़ा ज्यों रजनी का उन्माद - प्रभाव।।
पाया अन्त चढ़ाई ने जब तक क्रमशः आ गया उतार।
जैसे चन्द्र पूर्णता पाकर प्रतिदिन खोता चलता सार।।
रुद्रदेव की परम क्लान्ति ने दिया पृथक जीवन का स्वाद।
कामदेव श्रीहरि धाता ने उसको लिया सहित आह्लाद[7]।।

इस स्थल पर रुद्र के ताण्डव नृत्य की पराकाष्ठा और फिर उसके विसर्जन को यहाँ चन्द्रमा के क्रमशः विकसित होते हुए पूर्णता प्राप्त करने और उसके बाद फिर क्रमशः क्षीण होने के रूप में कवि ने स्पष्टतः चन्द्रमा के चय और क्षय अवस्था का उल्लेख किया। चन्द्रमा का क्रमश: पूर्णता की ओर बढ़ना चय है और पूर्णिमा के पश्चात् अमावस्या तक उसका उत्तरोत्तर घटते जाना क्षय है।

अत: यह प्रयोग पूर्णत: शास्त्रीय है[8]।

राशि

"कलकाशी" ने श्री जगन्नाथदास रत्नाकर ने राशि व उसके अन्तर्गत आने वाले नक्षत्रों का उल्लेख किया है। यथा -

श्रवन मकर कुण्डल बचत मुख सुषमा एकत्र ।
ससि समीप सौहत मनौ श्रवण मकर नक्षत्र[9] ।।

इस स्थल पर कवि ने मकर राशि तथा उसके अन्तर्गत आने वाला नक्षत्र-श्रवण और मकरस्थ चन्द्रमा का उल्लेख किया जो ज्योतिष शास्त्रीय है[10] ।
मकर का चन्द्रमा श्रीवान (लक्ष्मी प्रदाता), सन्तानसुख देने वाला, ऐश्वर्यवान तथा सौन्दर्यवान बनाता है[11] कवि ने यहाँ नख - शिख रूप चित्रण में इसका प्रयोग किया है।
इस स्थल का भाव मकरस्थ चन्द्र फल की पुष्टि करता है । अत: कवि का उक्त प्रयोग ज्योतिष दृष्टि से युक्तिपूर्ण एवं समीचीन है ।

भटूक -

"कामविधि बाम की कला में मीन मेष कहा[12]" ।

इस स्थल पर मीन-मेष पद की शिलिष्टता के कारण विभिन्न अर्थ वसन्त ऋतु, द्विद्वादिश योग आदि है ।
प्रस्तुत पंक्ति वसन्त ऋतु से ली गयी है । मीन एवं मेषस्थ रविकाल वसन्त ऋतु कहलाता है । क्योंकि ऋतुओं का कारण सूर्य है । अत: ऋतु दृष्टि से कवि का प्रयोग सफ़ल एवं सार्थक है । द्विद्वादिश योग की दृष्टि से मीन-मेष में 2-12 का सम्बन्ध है । अत: मीन से मेष दूसरी राशि है और मेष, मीन बारहवीं राशि दोनों में परस्पर 2-12 का सम्बन्ध हुआ । विवाह प्रकरण में वर कन्या मेलापक में यह ज्योतिषीय दृष्टि से एक दोष माना जाता है जो अनिष्टता का सूचक है । इस योग के होने पर विवाह सम्बन्ध होना शास्त्रीय दृष्टि से शुभफलदायक नहीं होता[13] । यह योग अल्प तथा परिहारवान है । इसलिए कविवर रत्नाकर जी ने भी यहाँ प्रदर्शित किया है । इस योग का अल्प एवं परिहार का कारण मीन-मेष राशि के अधिपतियों की परस्पर मैत्री है[14] । इसीलिए शास्त्र भी इस दोष पर बन नहीं देता । अत: दोनों दृष्टियों से कवि रत्नाकर जी का यह प्रयोग समीचीन एवं शास्त्रीय है ।

ग्रह

कविवर रत्नाकर जी ने सूर्य सम्बन्धी तथ्यों का प्रयोग किया है, एतद् विषयक स्थल द्रष्टव्य है -

"पद्म राग कुरू विंद नील गन्धी मानिक वर ।
स्वच्छ स्निग्ध समगात वृत्त गरुवे किरनाकर ।।
ब्रह्म वदर वैसौ ओ तिब्बत महि के कल भूषण ।
हूवै जिनसौ अनुरक्त प्रीति परिपालित पूषन[15]" ।।

कवि ने सूर्य सम्बन्धी तथ्यों का वर्णन करते हुए कहा है कि माणिक सूर्य का रत्न है[16] । सूर्य की आकृति वृत्ताकार है[17] तथा यह तिब्बतादि पूर्वी क्षेत्र का अधिपति है[18] । अत: कवि का उक्त प्रयोग ज्योतिष दृष्टि से युक्तिपूर्ण एवं समीचीन है ।

नक्षत्र

कवि श्री मैथिलीशरण गुप्त जी ने अपने काव्य "सिद्धराज" में नक्षत्रों का नामोल्लेख किया है । यथा -

अश्विनी के ऊपर सुभव्य भाव भरणी ।
कृत्तिका-सी वामियों के ऊपर चढ़ी हुई[19] ।।

यहाँ इस स्थल पर अश्विनी, भरणी, कृत्तिका ज्योतिष में नक्षत्रों के नाम है[20] । जिसका कवि ने यहाँ नामोल्लेख मात्र किया है ।

अंग-स्फुरण

ठहरत ठहरत वाम अंग लागे कुछु फरकन ।
औ ताही के सँग अनायासहिं हिय धरकन[21] ।।

यहाँ कवि ने पुरुष का वामाङ्ग स्फुरण अपशकुन कहा है, जो शास्त्रीय संगत है[22] ।

काव्यात्मक उपादेयता

हिन्दी के कविश्रेष्ठों ने ज्योतिष के पक्ष सम्बन्धी अनेकानेक प्रयोग किये है जो चन्द्र-सूर्य ग्रहण, चन्द्रमा के चय-क्षय, राशि, ग्रह, नक्षत्र, भटूक, अङ्ग स्फुरण से सम्बन्धित है । मात्रा की दृष्टि आधुनिक काव्यों में यह प्रयोग पर्याप्त कम दिखलायी देता है, सम्भवत: इसका कारण यही रहा है कि आधुनिक कवियों का ध्यान मनुष्यों की नाना समस्याओं की ओर आकृष्ट रहा है । इसलिए ज्योतिष के ग्रहण सैद्धान्तिक ज्ञानार्जन और फिर काव्य में इसके प्रदर्शन को उन्होंने न तो आवश्यक ही समझा और न उसका अवकाश ही उन्हें मिल सका है ।
हमने देखा है कि इस सम्बन्ध में जो प्रयोग हुए हैं, वे प्रायः उन्हीं कवियों अथवा उन्हीं रचनाओं में प्राप्त होते हैं, जिनका जुड़ाव किसी पूर्ववर्ती परम्परा से रहा है ।
ग्रहण प्रकरण में हमने देखा है कि इससे सम्बन्धित प्रयोग गंगावतरण में रत्नाकर द्वारा, उत्तर जय में नरेन्द्र

शर्मा द्वारा और पार्वती में रामानन्द शास्त्री द्वारा किये गये हैं ।

रत्नाकर ने गंगावतरण में सूर्य ग्रहण का संकेत करते हुए यह कहा है कि उपयुक्त उपाय न किये गये तो निर्मल सूर्यवंश राहु छाया द्वारा ग्रसित हो जायेगा । यहाँ कवि ने सूर्यग्रहण का आलंकारिक प्रयोग करते हुए सूर्य वंश की निर्मल और निस्कलंक कीर्ति के अक्षुण बनाये रखने की व्यञ्जना की है । निश्चय ही इस प्रयोग से कवि की भाव व्यंजना में निखार आया है ।

नरेन्द्र शर्मा के उत्तरजय में द्रोपदी के कथन के रूप ने महाभारत उपरान्त यादव कुल के विनाश का उल्लेख करते हुए चन्द्रग्रहण के सिद्धान्त प्रयोग किया गया है और कहा गया है कि यादव कुल रूपी पूर्णचन्द्र को अपने अहंकार रूपी राहु ने ही ग्रस लिया, यहाँ भी चन्द्रग्रहण का प्रयोग रूपक अलंकार की योजना में किया गया है और इस प्रयोग के शौर्य और पराक्रम की पूर्णत: तथा अहंकार के टकराव से उनके विनाश की बड़ी सुन्दर व्यंजना कवि ने की है । इस दृष्टि से यह प्रयोग कवि की भाव व्यञ्जना में पूर्णत: सहायक सिद्ध हुआ है ।

पार्वती महाकाव्य में इन्द्र की सभा में तारकासुर के आतंक से चिन्तित देवताओं और नैराश्य देवताओं का चित्रण करते हुए कहा है कि इस देवसभा में राहु ग्रस्त सूर्य की भाँति मलिन मुख और श्रीहीन बैठे हुए हैं, यहाँ कवि ने उपमा अलंकार की योजना करते हुए इन्द्र की समता राहु ग्रस्त सूर्य से की है और ज्योतिष परक आलंकारिक प्रयोग से मलिन मुख और श्रीहीन इन्द्र की सारी निश्चिन्तताओं और मनोजगत में व्याप्त निराला अन्धकार को बडी ही सफलता से व्यंजित कर दिया है, स्पष्ट है कि यह प्रयोग भी काव्यात्मक दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुआ है ।

चन्द्रमा की चय-क्षय से सम्बन्धित सिद्धान्त को 'गिरीश' जी ने तारक वध में चन्द्रमा के चय का प्रयोग करते हुए कहा है – "चन्द्रकला के संग बढ़ा ज्यों रजनी का उन्माद प्रभाव" इस माध्यम से कवि ने ताण्डव नृत्य के क्रमशः पूर्ण पराकाष्ठा तक पहुँचने का चित्रण किया है । क्रमश: चन्द्रकला के बढ़ने को उपमान बनाकर कवि ने क्रमश: बढ़ते हुए नृत्य उन्माद को कुशलता से प्रदर्शित कर दिया है । इसी नृत्य की पराकाष्ठा पर पहुँचकर क्रमशः उतार की ओर आने का वर्णन करते हुए कवि ने चन्द्र क्षय का प्रयोग किया है और स्पष्ट किया है कि जिस प्रकार पूर्णिमा को सम्पूर्ण कलाओं से पूर्ण होने के पश्चात चन्द्रमा प्रतिदिन अपनी कलाएं खोता चला जाता है, उसी प्रकार पूर्ण पराकाष्ठा पर पहुँचकर उस नृत्य में भी क्रमशः उतार आता चला गया, यहाँ भी कवि ने चन्द्र क्षय के माध्यम ने नृत्य की उतार का क्रमशः गत्यात्मक अंकन बड़े ही सफलता से किया है । इस प्रकार चन्द्र "चय-क्षय" के इस प्रयोग द्वारा कवि रुद्र के ताण्डव नृत्य के चरम अवस्था पर पहुंचने और फिर उसके क्रमशः कम होने का चित्रण ओर भी स्पष्टता और सजीवता से कर सकता है । इसी में इस प्रयोग की काव्यात्मक उपादेयता निहित है ।

रत्नाकर कलकाशी मे रूप चित्रण करते हुए मुख के निकट श्रवणों ने नवर-कुण्डल की शोभा के लिए प्रस्तुत करते हुए कहा चन्द्रमा के निकट श्रवण और मकर नक्षत्र सुशोभित है । इस प्रकार कवि ने यहाँ मकरस्थ चन्द्रमा और मकर राशि के अन्तर्गत आने वाले श्रवण नक्षत्र का उल्लेख किया है । उल्लेखनीय है कि मकरस्थ चन्द्रमा थी, ऐश्वर्य और सौन्दर्य प्रदाता माना गया है । अत: यहाँ इस प्रयोग से कवि ने आलंकारिक सौन्दर्य तो उत्पन्न किया ही है, साथ ही साथ इससे नायक के श्री, ऐश्वर्य और सौन्दर्य सम्पन्न होने की व्यंजना करते हुए भाव सौन्दर्य की श्रीवृद्धि भी की है । अत: यह प्रयोग अत्यन्त काव्यात्मक बन पड़ा है ।

भकूट का प्रयोग रत्नाकर ने उद्धवशतक में "काम विधि नाम की कला में मीन मेष कहा" के रूप में किया है । यह उल्लेख वसन्त ऋतु वर्णन में हुआ है और वह वसन्त ऋतु मीन एवं मेष राशि में स्थित रहता है । द्विद्वादिशयोग की दृष्टि से मीन, मेष में 2-12 का सम्बन्ध है । वह दोष होते हुए भी अल्प और परिहार माना गया है, इसीलिए रत्नाकर की गोपियाँ भी कहती है "काम विधि वाम की कला में मीन मेष कहा" इससे कवि के ज्योतिष ज्ञान का परिचय मिलता है । वसन्त के समय सूर्य की स्थिति का ज्ञान होता है और परिहार दोष के कारण इसके प्रति गोपियों की उपेक्षा और काम की सृष्टि में राशि आदि का विचार न करने के उनके भाव की बड़ी सटीक व्यंजना होती है ।

सिद्धराज में राष्ट्रकवि गुप्तजी ने अश्विनी, भरणी, कृत्तिका नक्षत्रों का उल्लेख करते हुए राजमाता मिनलदे के शिविर की सुरक्षा में निरन्तर सैन्य भेष में भ्रमण करती हुई वीर महिलाओं का चित्र प्रस्तुत किया है । यहाँ भरणी और कृत्तिका में क्रमशः श्लेष और उपमा अलंकारों के चमत्कार के साथ-साथ कवि उनके सुरम्य और प्रभावशाली सैन्य भेष का भावपूर्ण चित्रण करने में भी समर्थ हुआ है ।

अंग-स्फुरण के अन्तर्गत हरिश्चन्द्र काव्य में ही रत्नाकर ने जो पुरुष के वामांग फडकने का अपशगुन का वर्णन किया है, उसकी काव्यात्मक उपादेयता इसी बात से है

कि यह अपशकुन हरिश्चन्द्र के ऊपर आने वाले भावी संकट की पूर्व सूचना दे रहा है ।

हमने आधुनिक हिन्दी काव्य में ज्योतिष के विभिन्न प्रयोगों तथा उनकी काव्यात्मक उपादेयता का विवेचन करते हुए यह देखा है कि ज्योतिषीय प्रयोगों की दृष्टि से आधुनिक हिन्दी कविता भी दरिद्र नहीं है, ठीक है कि इस काल के कवियों में ज्योतिष और ज्योतिषीय प्रयोगों के प्रति मध्यकालीन कवियों जैसा समर्पण नहीं रहा है फिर भी अनेकानेक कवियों ने अत्यन्त सुन्दर एवं काव्य संगत ज्योतिषीय प्रयोग किये है ।

सन्दर्भ

1. गंगावतरण, छन्द 37/1
2. ज्योतिस्तत्वम्, पृ. – 583 "राहुणा ग्रस्यते शशी"
3. उत्तम जय...., नरेन्द्र शर्मा, पृ – 51
4. ज्योतिस्तत्वम्, पृ - 583-84
5. पार्वती-समा.-4, स्वर्ण की पुकार, पृ. -89
6. ज्योतिस्तत्वम्, पृ - 583-84
7. तारकवध, प्रथम सर्ग, पृ. – 32
8. सिद्धान्तशिरोमणि, मध्यमाधिकार, श्लोक – 19
9. कल"काशी, छन्द – 105
10. बाराही संहिता, अ. 102, श्लो. – 5
11. मानसागरी, नक्षत्र प्रकरण, श्लो. – 22
12. उद्धवशतक, छन्द – 87
13. शीघ्रबोध, भटूक प्रकरण, श्लो. – 130, "द्विद्वादिशे च दारिद्रयं" ।
14. मुहुर्तचिन्तामणि, विवाह प्रकरण, श्लो.- 32, "प्रोक्ते पुष्टे भटूक के" ।
15. कलकाशी, छन्द – 74
16. मुहुर्तचिन्तामणि, गोचर प्रकरण, श्लो.- 71
17. जातकपारिजात, श्लो. – 53
18. वाराही संहिता, अ. 16, श्लो. – 1
19. सिद्धराज, पृ. – 7
20. ज्योतिषसार, पृ. – 22
21. हरिश्चन्द्र, छन्द – 32/4
22. नारदपुराण, त्रिस्कन्ध ज्योतिष अपशकुन, अङ्ग स्फुरण प्रकरण ।